IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 5, Issue 1, May 2019
Impact Factor: 4.819

दलित साहित्य : जातिगत उत्पीड़न का जिन्दा दस्तावेज जूठन

डॉ. अजय कुमार बिन्द

असि. प्रो.

राजकीय महाविद्यालय नानौता, सहारनपुर

drajaybind@gmail.com

पूर्वी उत्तर प्रदेश में एक चर्चित कहावत है - *'जाके पाँव न फटे बिवाई, सो क्या जाने पीर परायी।'* दलित साहित्य को जानने से पहले, दलितों के विषय में सबसे पहले जानना जरुरी है की उनका रहन -सहन कैसा है, वे किस वातावरण में रहते है, कैसा कपड़ा पहनते हैं, कैसा खाते हैं और भी बहुत कुछ जो रोज की रोजमर्रा में करते हैं। मुझे वे दिन भी याद हैं कि उनको चारपाई और कुर्सी पर बैठने का हक़ भी नहीं था। उनको हमारे पूर्वजों नें जमीन पर बैठना शिखाया था। किसी के हाथ में झाड़ू थमा दिया गया..... उनकी पीढ़ियां आज तक झाड़ू ही लगा रही हैं। एक वो भी समय था कि दलितों को सुबह - शाम घर से निकलना वर्जित था क्यूंकि उस समय परछाई लम्बी होती थी....

और भी न जाने क्या क्या नियम पाबंदिया दलितों के ऊपर लगायी गयी थी, पढ़ने की तो कोई सोच ही नहीं सकता था।वो दौर भी देखे जब दिन भर बेगारी करायी जाती थी केवल चने -चबने पर। मजदूरी भला कौन मांगने की हिम्मत कर सकता था। वास्तव में दलित साहित्य वही हैं जिसने सब कुछ भोगा हैं, जिसने भोगा हैं वही सच्चा दलित साहित्य लिख सकता है।

वास्तव में यह दलित साहित्य है इसके अध्ययन के पश्चात किसी भी समाज का वास्तविक अध्ययन हो सकता है यदि दलित साहित्य नहीं होता तो यह जान पाना संभव होता कि हमारा सामाजिक इतिहास किन तकलीफ,अन्यायों शोषणों और असमानताओं का इतिहास है वास्तव में दलित साहित्य साक्षरता और लोकतांत्रिकता का भी खास प्रतिफल है शिक्षा ने दलित साहित्य को एक धार दी है और इस धार ने लोकतांत्रिक और बौद्धिक तौर पर विकसित होते समाज की गहरी पहचान हमें दी है दलित साहित्य लेखन और आंदोलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यही है वस्तुतः

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

सामाजिक अत्याचार अन्याय और शोषण केंद्रित और मानवीय भेदभाव वाले वर्णावादी दार्शनिक और पौराणिक तत्व ज्ञान के इस दुर्ग को महात्मा गांधी, प्रेमचंद और निराला की चेतावनियां हिला नहीं पाई थी अंततः इसे अंबेडकरवादी दर्शन प्रतिपक्षी विचार और रचना ही इसे ध्वस्त कर सकती थी यही हुआ भी। मराठी, कन्नड़,मलयालम, कोंकणी,पंजाबी,हिंदी आदि भाषाओं में यह रचना मानवीय उत्पीड़न और दमन से उपजी है इसलिए यह शत प्रतिशत मानवीय और सामाजिक है।दलित साहित्य ने सवर्णवादी समाज के सारे संहिताओं को खारिज करके अपना सामाजिक और रचनागत संविधान को खुद लिखना शुरू कर दिया है।दलित साहित्य ने साहित्यवादी,ललित वादी, सहानुभूति और स्वानुभूति के प्रश्नों से ऊपर उठकर अब ज्यादा बड़े सवाल उठानें शुरू कर दिए हैं। दलित साहित्य मनुष्य के मुक्ति का वह साहित्य है जो अमानुषों की ऐश्वर्यावादी साहित्य - संस्कृति में मनुष्य की अस्मिता के सवालों को निर्णायक रूप में तय कर रहा है।समता, बंधुता और स्वतंत्रता के अर्थों और व्याप्ति को नए आयाम दे रहा है।नए मानसिक भूगोल का निर्माण कर रहा है।

वर्णवादी पौराणिक साहित्यिक पूंजी से अर्जित ब्याज पर जो पेड़ या अब तक पलती और साहित्य में सम्मान पाती रही है, उनके सौंदर्यवादी, सुविधाभोगी जाति केंद्रित औपनिवेशिक स्रोतों को दलित रचना बंद कर रही है।दलित साहित्य नए उबड़ - खाबड़ स्थापत्य की रचना कर के सदियों से चले आने वाले वैचारिक अतिक्रमण को हटाकर दिलों दिमाग की बस्तियों को रहने लायक बन रहा है। इसलिए दलित लेखन अपने प्रत्येक रूप में विचारशील और रचनात्मकता में पूर्णतया व्यावहारिक लेखन है या नैतिकतावादी साहित्य का प्रत्यक्ष नहीं बल्कि पूरक है।यद्यपि वर्ग या समूह विशेष के रूप में मानव समाज के पिछड़ेपन की कहानी पुरानी है समझ में हमेशा से कुछ लोग सुविधा सम्पन्न और शोषण,तथा कुछ लोग दीन- हीन और शोषित रहे हैं।इतिहास के किसी भी काल में मानवीय सभ्यता और समरसत समाज का उदाहरण शायद ही मिलते हो।दलित समस्या की मनो-सामाजिक स्थिति यह है कि दलित अत्याचार के विरुद्ध जब भी आवाज उठाई जाती है तो व्यवस्था स्वतः दो भागों में बट जाती है।यदि सवाल गैर दलितों की ओर से उठाए जाते हैं तो थोड़ी बहुत बातों को सुना भी जाता है किंतु दलित अत्याचार और शोषण के सवालों को जब खुद एक दलित उठाता है तो उसको दरकिनार कर दिया जाता है क्योंकि व्यवस्था आज भी आज भी सामंतवादी ताकतों के हाथों में है। इस प्रकार इससे लड़ना और भी दुष्कर हो जाता है।दलित -चेतना साहित्य की परिभाषा में तो

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

केवल अनुसूचित जाति,जनजाति या अछूत कही जाने वाली जातियों की हीनावस्था से उत्पन्न चेतना है।किंतु व्यापार का स्तर पर इसमें भारतीय समाज की पिछड़ी जातियां भी आ जाती है।

दलित समाज शोषण और उपेक्षा का हमेशा शिकार रहा है।जिसके अनेक कारणों में मुख्य कारण है -उसका अशिक्षित होना,लेकिन इसके साथ ही दलित विमर्श के लिखित एवं वाचिक परंपराओं का भी तीव्र विकास हुआ है।पिछली शताब्दी के पूर्वार्ध में महात्मा गांधी दलित काम अपनाने का साहस दिखाते हुए यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि छोटा -बड़ा कोई नहीं होता।यहां गांधी जी के सद्भाव की कोई कमी नहीं है। वह समभाव जागृत कर समस्या का समाधान करना चाहते हैं, लेकिन डॉ.भीमराव अंबेडकर शास्त्र और मिथकों के बल को कमजोर करना चाहते हैं। जो छोटे -बड़े की भावना को पारंपरिक शक्ति देता है। आदिकाल से आज तक दलित- दशा पर यदि विचार करें तो अनेक परिवर्तनों के बावजूद उसका मूल -संघर्ष आज भी वैसे ही है।दलित वर्ग सदैव से संघर्षशील समाज का अ विभाजित अंग रहा है।प्रख्यात समाजशास्त्री एम. एन.श्रीनिवास ने सन 1966 में प्रकाशित अपनी पुस्तक सोशियोलॉजिकल स्टडी ऑफ मॉडर्न इंडिया में लिखा है-" वैदिककाल में ऋग्वेद के पुरुष सूक्त से जो वर्णन व्यवस्था चली,वह आज भी जारी है।यहां तक कि अंग्रेजों के शासनकाल में भी वर्ण व्यवस्था को प्रोत्साहित किया गया।हालांकि अंग्रेजों ने सती प्रथा,मानव बलि और दास प्रथा को रोकने का प्रयास किया लेकिन इसका लाभ उच्च वर्ग को ही मिला जबकि शिक्षा और जागरूकता के अभाव में दलित इससे वंचित रह गए।दलित मसीहा डॉ.अंबेडकर ने किसी नेता का भेष धारण नहीं किया। उनका पाखंड में विश्वास कभी भी नहीं था लेकिन जननेता के रूप में बाबू जगजीवन राम ने भारतीय राजनीति के शीर्ष पर रहकर दलितों को सामाजिक और राजनीतिक संघर्ष का एहसास कराया। जगजीवनराम ज्यादा ही विश्वसनीय दलित नेता के रूप में राजनीतिक क्षितिज पर चमके।वह राष्ट्रीय नेता थे, दलित समाज के साथ ही उन्होंने पूरे भारतीयता को प्रभावित किया।इसी क्रम में सन 1964 में सरकारी नौकरी से इस्तीफा देने के बावजूद रिपब्लिकन पार्टी, बामसेफ और बहुजन समाज पार्टी तक के सफर में कांशीराम ने दलितों को एकताबद्ध कर अत्याचारों का प्रतिरोध करने तथा उन्हें समाज में न्यायोचित स्थान दिलाने के लिए जोरदार ढंग से प्रेरित किया।

दलित विमर्श अब साहित्यिक संदर्भ में भी अपने चरम पर है।शरद कुमार लिम्बाड़े के अनुसार -"दलित साहित्य अपना केंद्र बिंदु मनुष्य को मानता है।दलित वेदना,दलित साहित्य का जन्मदायी है।वास्तव में यह बहिष्कृत समाज की वेदना है। "*शुरुआत में दलित साहित्य के मुख्य विधा आत्मकथा*

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 5, Issue 1, May 2019 Impact Factor: 4.819

ही रही, जो भोगे हुए यर्थात पर आधारित है"। अपने अपने पिंजरे में मोहनदास नैमिषराय अपने इर्द -गिर्द गांव,टोल,मोहल्ले में अपना बचपन जीते हुए उसके पूरे समाज का व्यापक अवलोकन करते हैं।दलित साहित्य का इतिहास भी उतना ही पुराना है जितना की हिंदी साहित्य का इतिहास।संघर्षशील जीवन में भोग गया यथार्थ,गरीबी का दंश,तिरस्कार आदि वेदना को अनेक दलित लेखक/लेखिकाओं ने अपने आत्मकथा लेखक से उद्घाटित किया है -*'मैं भंगी हूं '-भगवानदास, 'अपने-अपने पिंजरे'- मोहनदास नैमिषराय, 'दोहरा अभिशाप'- कौशल्या बैसत्री, 'जूठन'-ओमप्रकाश वाल्मीकि, 'उठायीगीर'- लक्ष्मण गायकवाड़, 'झोपड़ी से राजभवन'-माताप्रसाद, 'घूंट अपमान के'- सूरजपाल,'मेरी मंजिल मेरा सफर'- डी. आर. जाटव,'मेरे गुनाह'- श्रवण कुमार,'हमारा जीवन'-बेबी कांबले, सहित श्योराजसिंह बेचैन* आदि की आत्मकथाएं महत्वपूर्ण है। ओम प्रकाश वाल्मीकि द्वारा रचित 'जूठन'आत्मकथा दलित साहित्य की एक महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है।जिसे हम दलित उत्पीड़न का जिंदा दस्तावेज भी कह सकते हैं।

'जूठन' जातिगत उत्पीड़न और अतिदलित समाज के संघर्ष का आख्यान है।यह आत्मकथा ही नहीं अतीत की घटनाओं और पीड़ादायी अनुभव से उत्पन्न दर्द की कराह है।जहां लेखक ही नहीं समय - समाज भी मौजूद है। यातनामय भयावहता के साथ।आत्मकथा में उपेक्षा - अत्याचार का लगातार सिलसिला है। जिस से आक्रोश - विरोध का उपजना स्वाभाविक है। इससे गुजरते हुए संवेदनशील पाठक की सांसे रुक सकती हैं। नस फट सकती है।ऐसी ही घटनाएं और परिस्थितियों दलित -साहित्य के उद्भव के जड़ में है। 'जूठन' के आरंभ में दलित साहित्य की विषय- वस्तु और आत्मकथा लिखने के कारणों पर टिप्पणी ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने लिखा है -*"दलित जीवन की पीड़ाएं असहनीय और अनुभव दग्ध है। ऐसे अनुभव जो साहित्यिक अभिव्यक्तियों में स्थान नहीं पा सके। वह अब दलित आत्मकथाओं में स्थान नहीं पा सके।*"'जूठन' सिर्फ ओमप्रकाश वाल्मीकि आत्मकथा नहीं बल्कि दलित समाज का भोगा हुआ सच है। जहां जाति -व्यवस्था की खतरनाक खाई है और वहां से आने वाली दर्दनाक चीखें है।पढ़ते समय लगता है कि 'जूठन' आह से उपजा हुआ आख्यान है। वरिष्ठ घटनाएं और प्रसंग वर्ण व्यवस्था के निर्ममता की प्रमाण है। आश्चर्य होता है कि ऐसा पहले हमारे समाज के लोगों ने दलित वर्ग के साथ किया है.....।

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in

ISSN 2581-9429 IJARSCT